डॉ॰ ओम प्रकाश सिंह से डॉ॰ महेश 'दिवाकर' की बातचीत

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– आपने किस अवस्था में और कौन–सी परिस्थितियों के कारण लेखन आरम्भ किया?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंह: शैशव काल से ही लिखने की आवश्यकता महसूस हुई। जब व्यक्ति मन पर समाज के आघात जाने या अनजाने पड़ते हैं तो मन अपनी ही भाषा में अपनी पीड़ा की अभिव्यक्ति कर बैठता है। जब यह पीड़ा अपनी निजी होकर व्यक्त होती है तब व्यक्तिवाद और जब यह पीड़ा निजता के दायरे को तोड़कर समाज की हो जाती है तो समाजवाद के स्वर मुखरित होते हैं। तो यह समझिये कि मैं 'व्यक्ति' से 'समाज' की ओर उन्मुख हुआ हूँ।

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– आपके जीवन और व्यक्तित्व पर किसका प्रभाव पड़ा? आपका रचनाकार किन साहित्यकारों से प्रभावित है?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंह: सच कहूँ? अपनी माँ और बाबा का। माँ ने मुझे मानवीय संवेदना का पाठ पढ़ाया बालपन में और बाबाजी ने सामाजिक सरोकार से मुझे जोड़ा। मैं इन दोनों आत्मीय जनों का चिर ऋणी हूँ। साहित्यिक दृष्टि से मैं कबीर, तुलसी, प्रसाद, निराला, दिनकर से, और अज्ञेय से विशेष प्रभावित हूँ– वैचारिक दृष्टि से।

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– आपकी दृष्टि में कविता क्या है?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंह: मेरी कविता एक प्रार्थना है। यह वह संवेदना है जो व्यष्टि को समष्टि से जोड़ती है। जो व्यक्ति को सामान्यतः आचार–संहिता देती है और उसे अपना हक पाने के लिए दृष्टि और दिशा प्रदान करती है। वह मनुष्य के भावों और विचारों की अभिव्यक्ति का एक सहज माध्यम है। यह नाद बिन्दु से उठी हुई वह लय है जो व्यक्ति को प्रेम की परिधि में प्रवेश कराने में सहायक सिद्ध हुई है। सच पूछिये तो मेरी जिन्दगी ही एक कविता है जो मुझे लोक–संवेदना के स्वर–छंद देती है।

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– प्रारम्भ में आपकी अभिरुचि पद्य में अधिक थी या गद्य में?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंह: प्रारम्भ में मैंने पद्य–विधा ही चुनी थी, किन्तु उच्च–शिक्षा पूर्ण करते–करते मैं गद्य में अधिक रुचि लेने लगा। जब कुछ कहानियाँ, उपन्यास, नाटक एवं एकांकी लिखे, परन्तु बाद में नयी कविता से नवगीत की ओर उन्मुख हुआ। नयी कविता का तो मैं मात्र विद्यार्थी ही हो पाया था।

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– आपने स्वातंत्रयोत्तर भारत की अनेक समस्याओं को अपनी रचनाओं में चित्रित किया है, किन्तु आपकी दृष्टि में सबसे अधिक महत्वपूर्ण समस्या कौन सी है?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंह: जिन्दगी एक ऐसी नदी है जो मनुष्य और प्रकृति के दो किनारों से होकर गुजरती है। स्वाभाविक है इन दोनों की अपनी समस्याएँ हैं। ये ही प्रस्तुत या अप्रस्तुत रूप से मनुष्य और प्रकृति को प्रभावित करती हैं। भले ही स्वातंत्रयोत्तर भारत की अनेक समस्याएँ रही हैं मगर उसके केन्द्र में आज का मनुष्य ही तो खड़ा है। अतएव मैंने सदैव मनुष्य की संवेदना को रेखांकित किया है अपने गीतों में, उसे ही स्वर दिया है, कुण्ठित होने से बचने का प्रयत्न किया है और उसे लयबद्ध करने की भरसक कोशिश की है। आज सबसे बड़ा संकट कम से कम भारत में मनुष्यता का संकट है। मनुष्य की संवेदना का संकट है; उसकी तलाश होनी ही चाहिए।

साक्षात्कार

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– आपके काव्य की मूल संवेदना क्या है? अन्य प्रमुख स्वर कौन से हैं?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंहः हमारे काव्य की मूल संवेदना सामाजिक सरोकार है। कारण यह है कि वीरगाथा काल के काव्य की मूल संवेदना वीर रस रहा है। ऐसे ही भक्ति काल में भक्ति, रीतिकाल में श्रृंगार है और आधुनिक काल में काव्य की मूल संवेदना सामाजिक सरोकार है। इसके अतिरिक्त प्रेम, करूणा और सौंदर्य तो जीवन सत्य हैं। आज की कविता में वैश्विक संस्कृति, बाजारवाद, उदारीकरण या भूमण्डलीकरण और राष्ट्रीय जागरण पर विशेष जोर दिया जाता रहा है। एक ओर मनुष्य और उसकी समस्याएँ हैं तो दूसरी ओर प्रकृति।

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– हिन्दी का दुर्भाग्य है कि इसमें रचित विधाओं को वादों और आन्दोलनों में घसीटा गया है, इस बारे में आपकी क्या राय है?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंहः 'मुण्डे–मुण्डे मतिर्भिन्नः', हर व्यक्ति का अपना मत होता है और उसे अपना मत प्रकट करने की स्वतंत्रता भी होनी चाहिए। फिर मत–मतान्तर भी खड़े होंगे ही। यदि यह स्थिति होगी तो उसके समर्थक और विरोधी या विपरीत विचार वाले भी होंगे। यह तो भारतीय मनीषियों का शुभ लक्षण है। वे भेड़ की चाल नहीं चले बल्कि 'बिना लीक तीन्यो चलैं, शायर, सिंह, सपूत।' सचमुच इस देश में शास्त्रार्थ की परम्परा रही है; इसीलिए उन विचारकों के अनुयायियों की भी परम्परा मिलती रही है। यह सौभाग्य की बात है, दुर्भाग्य की नहीं। जहाँ बोलने या विचार प्रकट करने की स्वतंत्रता नहीं होती वहाँ एक की आवाज ही सर्वोपरि होती है और उस जनमानस को उस एक की आवाज पर 'हुँआ–हुँआ' करना पड़ता है।वैचारिक मन्थन के लिए वादों–विवादों की अपेक्षा होनी ही चाहिए किन्तु सृजनात्मक धरातल पर।

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– विश्व में पूँजीवादी और साम्यवादी दो विचारधाराएँ कार्य कर रही हैं। साहित्यकार इसी आधार पर खेमेबद्ध हैं। उसे तटस्थ होकर क्या बिना विवाद सृजन नहीं करना चाहिए?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंहः शायद आपको यह पता नहीं कि सर्जना के क्षण तटस्थ अथवा मौनता के होते हैं क्योंकि कोई भी रचना रचनाकार की भाव–समाधि का प्रतिफल है। यह एकलयता एवं अंतर्नाद की साधना की स्वीकृति है। कुछ भी हो, तटस्थता या समता की भूमि ही रचना की उर्वर भूमि है। वहाँ वाद–विवाद एवं संवाद के लिए कोई स्थान नहीं। कहा न, कि अनुभूति के क्षण मौनता के होते हैं, उस क्षण केवल अपने अनुभव– सत्य का साक्षात्कार ही किया जा सकता है वह भी एक अनुगूँज की कोर पर आरूढ़ होकर। फिर भला कबीर और तुलसी के बारे में आप क्या कहना चाहेंगे? वे पूँजीवादी व्यवस्था के समर्थक हैं या साम्यवादी? क्या उनसे भी बड़ा कोई कवि दिखाई देता है आधुनिक युग में? वे न तो पूँजीवादी हैं न ही साम्यवादी, बल्कि वे मूलतः समन्वयवादी हैं। ये विचारधारा या वैचारिक परम्परा आज भी विद्यमान है और ऐसे साहित्यकार युग सापेक्ष चिंतन करते हुए समाज को मौलिक सम्बल प्रदान करते हैं, जैसे– गाँधी, अरविन्द और विवेकानन्द । यह प्रकृति/सृष्टि/अपनी समृद्धि को जब लोकमानस में बिखेरती है तो पूजनीय हो जाती है जैसे वृक्ष।

डॉ॰ महेश दिवाकर– आज साहित्यकार अहंवादी है, मूडी है, घोर व्यावसायिकता में डूबा है। वह एक कृति आने पर ही पुरस्कार–सम्मान के लिए जुगाड़ करने लग जाता है? आपकी क्या राय है?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंहः सच कहा आपने, साहित्यकार की ऐसी मंशा हो सकती है आज, मगर हर कोई एक–सा नहीं। कुछ ऐसे भी हो सकते हैं। किन्तु सोचो तो जरा? कौन है जो मर–खपकर कुछ पाना चाहता है– सब सहज ही उपलब्धियाँ बटोरना चाहते हैं। कुछ ऐसे भी मिलेंगे जरूर जो 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचनः' का पाठ भगवद्गीता के श्रीकृष्ण से पढ़ चुके हैं। वे अपनी मौज में रहते हैं। कुछ पाने के लिए उन्हें जुगाड़ नहीं करना पड़ता है, कन्हैया उन्हें सहज ही दे देते हैं। फिर तो किसी को बुरा नहीं लगना चाहिए। जुगाड़ वालों के लिए कहा गया है– 'अब के कवि खद्योत सम, जहँ–तहँ करैं प्रकाश।' सूर्य के समक्ष जुगनुओं का भला क्या अस्तित्व? सितारे भी शर्मिन्दा होते हैं।

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– क्या आज का साहित्यकार अपने पथ से भटक गया है, अथवा उसमें दायित्व बोध की कमी आयी है?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंहः वाह! यह आप कैसे कह सकते हैं? क्या आपने आज के साहित्यकार को पढ़ा है– निराला, प्रसाद, दिनकर, अज्ञेय, नागार्जुन और सर्वेश्वर को? कुछ तथाकथित साहित्यकारों की बात तो आप नहीं कर रहे हैं? वह न तो पथ विचलित हैं और न ही अपने दायित्व–बोध से अलग हुए हैं। हाँ, हर साहित्यकार अपने युगधर्म या युग–सन्दर्भों से जुड़ा होता है। आज का परिवेश और उसकी स्थिति उसे आधुनिक बोध की रचना करने के लिए विवश करती है। इन साहित्यकारों की भीड़ में कुछ ही मौलिक हैं जैसे हम सब मनुष्यों की भीड़ में कुछ ही मनुष्य बचे हैं, जो मनुष्यता के प्रति सजग हैं।

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– क्या गीत के लिए छंद आवश्यक हैं, यदि हाँ तो आज की समकालीन कविता के बारे में आपके क्या विचार हैं?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंहः समकालीन कविता छंदमुक्त कविता है किन्तु गीत, छंदबद्ध गीत के लिए छंद आवश्यक हैं, नयी कविता के लिए नहीं। गीत गीत हैं और नयी कविता जो है, वह है। गीत के लिए लय, राग, संगीत, छंद– इन सभी की जरूरत है। ये गीत रचना के मूलभूत तत्व हैं। इसमें फर्क क्या पड़ता है? आप चाहे गीत, लिखें, दोहे या मुक्तक लिखें और चाहे नयी कविता। ये सभी मनुष्य की अभिव्यक्ति के माध्यम हैं। बात सिर्फ इतनी है कि सर्जक को सृजनशीलता के धरातल पर रहकर अपने अनुभव–सत्यों को शब्द–शब्द उकेरना चाहिए।

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– नवगीत से क्या अभिप्राय है? उसमें भावपक्ष और कलापक्ष का क्या स्थान है? ये इतने दुरूह क्यों हैं?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंहः नवगीत को मैं गीत का विकसित रूप मानता हूँ। ये पारम्परिक गीत के अगले पायदान पर स्थापित हैं। इनके कहन और गठन दोनों में नवता और ताजगी देखने को मिलेगी। उत्तर आधुनिकता के इस दौर में जहाँ वैश्विक संस्कृति अपना आकार लेने लगी है और आणविक शक्तियों की टकराहट से भयातुर मानव उदारीकरण और भूमण्डलीकरण की बात करने लगा है। यही नहीं, इस अर्थयुग में बाजारवाद के बढ़ते दबाव के कारण आज मनुष्य की जिन्दगी पत्थरों के शहर में यांत्रिक होकर रह गई है। ऐसे में अपने–अपने विज्ञापन की पिपासा उसके भीतर के मनुष्य को नुमाइशी व बहुरूपियापन से ढँकती जा रही है। भला ऐसे में कहीं खैर है? मनुष्य, प्रकृति, समाज से इतर होगा ही क्या? बस, युग संदर्भ से जुड़ी बातें आज के सामाजिक सरोकार को उजागर कर रही हैं। प्रेम, सौन्दर्य और करुणा को साहित्य के मंच पर वंचित होते देख सभी मौलिक साहित्यकार चिंतित जरूर हैं मगर हैं निरूपाय। हर कोई अपनी जगह से आज सच के लिए उपदेश कर रहा है चाहे साहित्यकार हो या राजनायिक या धार्मिक उपदेशक। कलापक्ष या गठन की दृष्टि से लक्षणा व व्यंजना में बात कहने के लिए गीतकारों ने नये बिम्बों, नये प्रतीकों और नये उपमानों का भरपूर प्रयोग किया है। रस–अलंकार तो नये छंदों में स्वतः फूट पड़ते हैं। प्राकृतिक, काल्पनिक, व्यवहारिक बिम्बों के साथ–साथ वैज्ञानिक एवं ऐतिहासिक बिम्बों के नवीन प्रयोग उत्तर आधुनिकता की धरती पर नवगीतों की पहचान बन गये हैं। स्पष्ट है कि अपरिचित एवं अव्यावहारिक बिम्ब, नये प्रयोग साधारणीकरण के अभाव में सम्प्रेषणीय न हो पाते होंगे, लेकिन ये अपवाद मात्र हैं। आज तो नवगीत आंचलिक बोध लेकर सहज अभिव्यक्ति के लिए आतुर हैं। इसीलिए नवगीतों की लोक–संवेदना को बोलचाल की भाषा मिल रही है। आंचलिक शब्दों, मुहावरों एवं कहावतों के प्रयोग भी धड़ल्ले से हो रहे हैं।

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– आपकी प्रमुख विधा कौन–सी है? अन्य कौन–सी विधाओं में आपने लेखन किया है?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंहः क्या बताऊँ मैं आपसे? मेरा मन बड़ा मौजी है। वह जिस विधा में प्रवेश लेता है उसी में कुछ कर गुजरने की चाह रखता है। वैसे मेरे लेखन की प्रमुख विधा नवगीत ही हैं। दोहे, मुक्तक, ग़ज़लें, गीत, नई कविता, एकांकी, नाटक, उपन्यास, कहानी, निबन्ध समीक्षा में भी कार्य किया है। कुछ यात्रा वृत्तान्त व संस्मरण भी लिखे हैं। कविता, कहानी और समीक्षा से मैं सदैव जुड़ा रहा हूँ।

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– साहित्य के क्षेत्र में आपको किस बात का अभाव खटकता है?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंहः साहित्य के क्षेत्र में मुझे मनुष्य की संवेदना की सच्चाई का अभाव खटकता है। लोग कहते तो हैं कि मेरा भोगा हुआ यथार्थ है जो मैं कह रहा हूँ, लेकिन वह होता नहीं। महानगरों के एयरकंडीशन में बैठकर अर्थात् पूँजीवाद की गोद में सांस लेकर हमारे साहित्यकार किसानों, मजदूरों व शोषितों की बातें करते नहीं अघाते, उनसे हजारों मील दूर रहकर, जाने यह काल्पनिक सच राजनयिकों की भाँति साहित्य में राजनीति का विष घोल रहा है। फिर दूसरा अभाव साहित्य के प्रकाशन की सुविधा न होना और तीसरा, इस आपाधापी के व्यस्त जीवन में साहित्य के पाठकों का ग्राफ गिरता ही जा रहा है। पुस्तकें प्रकाशनों और पुस्तकालयों से बाहर फुटपाथों पर उतर आई हैं, मगर उनके ग्राहक नहीं मिलते। इसका कारण कुछ घटिया साहित्य ही नहीं, बल्कि घटिया मानसिकता भी नहीं। रोटी– रोजी की जुगाड़ में लोगों को विचारों और पुस्तकों की जरूरत कहाँ? अब तो आदमी को अच्छे विचारों की नहीं, अच्छे पैसों की तालाश है।

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– हिन्दी नवगीत के क्षेत्र में आपकी गणना प्रमुख नवगीतकारों में होती है। आपकी प्रमुख नवगीत कृतियाँ कौन–सी हैं?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंहः नवगीतकार 'स्वान्तः सुखाय रघुनाथगाथा' का साधक है। अब कितना वह परमार्थहिताय हो रहा है यह हमारे पाठक और समीक्षक जानें। हमारे लिए यह संतोष की बात है कि मेरे भी नवगीत के चहेते और पारखी हैं, इसके लिए आप सबको साधुवाद। मैं तो मैथिलीशरण गुप्त के शब्दों में यही कहूँगा– 'राम तुम्हारा वृत्त स्वयं ही काव्य है, कोई कवि बन जाय सहज संभाव्य है।' मेरी प्रमुख नवगीत कृतियाँ हैं– सर्जना के पंख, गीत मेरे मीत, जंजीरों को तोड़ो, दीप जलने दो, इन्द्रधनुषी गीत मेरे, एक नदी है गीत, ये समय के गीत हैं, गीत हमारे यायावर हैं। इनके अतिरिक्त मेरी तीन पाण्डुलिपियाँ नवगीत की नवता लेकर प्रकाश्य हैं।

डॉ॰ महेश 'दिवाकर'– आज के रचनाकारों को आप क्या संदेश देना चाहेंगे?

डॉ॰ ओम प्रकाश सिंहः लेखक की ईमानदारी और मनुष्य की रक्षा इस आर्थिक दौड़ में अति आवश्यक है। बस यही कहूँगा– 'मैं वह गीत नहीं लिख पाया/ जिसके बाद कुछ न लिखना हो।'

सम्पर्क–
– डॉ॰ ओम प्रकाश सिंह, डी॰लिट्॰
259, शान्ति निकेतन, साकेतनगर, लालगंज
रायबरेली (उ॰प्र॰) भारत

–डॉ0 महेश दिवाकर
सरस्वती भवन, मिलन विहार
मुरादबाद (उ.प्र.)
मो.–09927383777